रामचरित मानस का 'केवट प्रसंग' : एक विश्लेषण

डॉ. श्रीधरम

(छात्र पाठ्यपुस्तक में दिए गए गोस्वामी तुलसीदास के कृतित्व और व्यक्तित्व से भलीभाँति परिचित हैं। यहाँ सिर्फ 'केवट प्रसंग' का पाठ विश्लेषण दिया जा रहा है ताकि संदर्भित प्रश्नों के उत्तर देने में आसानी हो)

प्रस्तुत पाठ में गोस्वामी तुलसीदास ने श्रीराम का जो व्यक्तित्व हमारे सामने प्रस्तुत किया है वो मानवता और प्रेम से ओतप्रोत है। तुलसीदास के राम प्रेम के भूखे हैं। वे स्पष्ट कहते हैं कि, "सब ते अधिक मनुज मोहि भाए"। उनके प्रेमिल छाया में मानव से लेकर पशु-पक्षी, कीट-पतंग, जड़-जंगम सबको जगह मिलती हैं। श्रीराम कमजोर अर्थात सामान्य लोगों का साथ देने के लिए हर कीमत चुकाने को तैयार रहते हैं। उनके मित्रों में वानर सुग्रीव, हनुमान, गिद्ध जटायु, दलित स्त्री सबरी, सुमंत्र और केवट सब शामिल हैं। प्रस्तुत पाठ का यह प्रसंग श्रीराम के वनगमन का है। श्रीराम अपने पिता के लाख मनाने के बावजूद चौदह वर्ष के लिए अपनी भार्या अर्थात पत्नी सीता और अनुज लक्ष्मण के साथ वन-यात्रा पर निकल चुके हैं। राजा दशरथ ने अपने सारथी सुमंत्र से कहा था कि राम को थोड़ा जंगल घूमा-फिराकर और गंगा स्नान कराकर सीधे अयोध्या वापस ले आना, लेकिन राम तो मर्यादा पुरुषोत्तम थे। वे तो अपने प्राण की कीमत पर 'वचन' को निभाने वाले थे। इसीलिए वे सारथी सुमंत्र को समझा-बुझाकर किसी तरह वापिस अयोध्या भेजकर जंगल की तरफ निकल गए। लेकिन जंगल के रास्ते में उन्हें सबसे पहले गंगा पार करना था जहां उनकी भेंट भक्त केवट से होती है जो किसी भी प्रकार से उनका चरण धो लेना चाहता है, ताकि उसका इहलोक और परलोक, दोनों सुधर जाए। दरअसल अनपढ़ केवट राम के पाँव धोने के लिए जो भोला-भाला तर्क देता है वह उसके सरल हृदय और अकुंठ प्रेम का प्रमाण है। तो आइये देखते हैं रामचरितमानस के इस अद्भुत प्रसंग का भावार्थ सहित मूल पाठ और फिर उसका विश्लेषण करते हैं। कोष्ठक में भावार्थ दिए जा रहे हैं ताकि शब्दार्थ भी आसानी से समझ में आ जाए-

दो० - रथु हाँकेउ हय राम तन हेरि हेरि हिहिनाहिं।
देखि निषाद बिषादबस धुनहिं सीस पछिताहिं॥ 99॥

(सुमंत्र ने रथ को हाँका, घोड़े राम की ओर देख-देखकर हिनहिनाते हैं। यह देखकर निषाद लोग विषाद वश सिर धुन-पीट-पीटकर पछताते हैं। कि आज श्रीराम के सान्निध्य का अवसर मुझे क्यों नहीं मिला)

जासु बियोग बिकल पसु ऐसें। प्रजा मातु पितु जिइहहिं कैसें॥
बरबस राम सुमंत्रु पठाए। सुरसरि तीर आपु तब आए॥
मागी नाव न केवटु आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना॥
चरन कमल रज कहुँ सबु कहई। मानुष करनि मूरि कछु अहई॥
छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन तें न काठ कठिनाई॥
तरनिउ मुनि घरिनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव उड़ाई॥
एहिं प्रतिपालउँ सबु परिवारू। नहिं जानउँ कछु अउर कबारू॥
जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू। मोहि पद पदुम पखारन कहहू॥
(जिस राम के अयोध्या छोड़ने के वियोग में पशु भी इस प्रकार व्याकुल हैं, उनके वियोग में प्रजा, माता और पिता कैसे जीते रहेंगे? राम ने जबरदस्ती सुमंत्र को लौटाया। और फिर गंगा के तट पर आए। राम ने केवट से नाव माँगी, पर उसने हिचकते हुए मना कर दिया। वह कहने लगा - मैंने आपका मर्म (भेद) जान लिया है। आपके चरण कमलों की धूल के लिए सब लोग कहते हैं कि उसमें मनुष्य बना देनेवाली कोई चमत्कारपूर्ण जड़ी है। जिसके छूते ही पत्थर की शिला सुंदर स्त्री हो गई थी और मेरी नाव तो लकड़ी की है। काठ पत्थर से कठोर तो होता नहीं। मेरी नाव भी मुनि की स्त्री हो जाएगी और इस प्रकार मेरी नाव उड़ जाएगी, मैं लुट जाऊँगा अर्थात रास्ता रुक जाएगा, जिससे आप पार न हो सकेंगे और मेरी रोजी मारी जाएगी। मेरा कमाने-खाने का जरिया ही मारा जाएगा। मैं तो इसी नाव से सारे परिवार का पालन-पोषण करता हूँ। दूसरा कोई धंधा नहीं जानता। हे प्रभु! यदि आप अवश्य ही पार जाना चाहते हैं तो मुझे पहले अपने चरण-कमल पखारने (धो लेने) के लिए कह दीजिए।)

छं० - पद कमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं।
मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साची कहौं॥
बरु तीर मारहुँ लखनु पै जब लगि न पाय पखारिहौं।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपाल पारु उतारिहौं॥
(तुलसीदास कहते हैं कि केवट ने श्रीराम से कहा- हे नाथ! मैं चरण कमल धोकर आप लोगों को नाव पर चढ़ा लूँगा; मैं आपसे कुछ 'उतराई' नहीं चाहता। हे राम! मुझे आपकी दुहाई और दशरथ

की सौगंध है, मैं सब सच-सच कहता हूँ। लक्ष्मण भले ही मुझे तीर मारें, पर जब तक मैं पैरों को पखार न लूँगा, तब तक हे कृपालु! मैं पार नहीं उतारूँगा।)

सो० - सुनि केवट के बैन प्रेम लपेटे अटपटे।
बिहसे करुनाऐन चितइ जानकी लखन तन॥ 100॥
(केवट के प्रेम में लपेटे हुए अटपटे वचन सुनकर करुणाधाम राम जानकी और लक्ष्मण की ओर देखकर हँसे। अर्थात केवट के प्रेम की तरफ उन दोनों का ध्यान आकर्षित किया)

कृपासिंधु बोले मुसुकाई। सोइ करु जेहिं तव नाव न जाई॥
बेगि आनु जल पाय पखारू। होत बिलंबु उतारहि पारू॥
जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहिं नर भवसिंधु अपारा॥
सोइ कृपालु केवटहि निहोरा। जेहिं जगु किय तिहु पगहु ते थोरा॥
पद नख निरखि देवसरि हरषी। सुनि प्रभु बचन मोहँ मति करषी॥
केवट राम रजायसु पावा। पानि कठवता भरि लेइ आवा॥
अति आनंद उमगि अनुरागा। चरन सरोज पखारन लागा॥
बरषि सुमन सुर सकल सिहाहीं। एहि सम पुन्यपुंज कोउ नाहीं॥
(केवट के प्रेम भरे भाव से भावविभोर होकर कृपा के समुद्र राम केवट से मुसकराकर बोले - आप वही कीजिए जिससे आपकी नाव बची रहे। जल्दी पानी लाकर मेरे पैर धो दें। देर हो रही है, पार उतार दें। तुलसीदास कहते हैं कि एक बार जिनका नाम स्मरण करते ही मनुष्य अपार भवसागर के पार उतर जाते हैं और जिन्होंने अपने वामनावतार में सम्पूर्ण जगत को अपने तीन कदम से भी छोटा कर दिया था (दो ही पग में त्रिलोकी को नाप लिया था), वही कृपालु राम गंगा पार करने के लिए केवट का निहोरा अर्थात विनती कर रहे हैं! प्रभु के इन वचनों को सुनकर गंगा की बुद्धि मोह से खिंच गई थी (कि ये साक्षात भगवान होकर भी पार उतारने के लिए केवट का निहोरा कैसे कर रहे हैं)। परंतु (समीप आने पर अपनी उत्पत्ति के स्थान) पदनखों को देखते ही (उन्हें पहचानकर) देवनदी गंगा हर्षित हो गईं। (वे समझ गईं कि भगवान नरलीला कर रहे हैं, इससे उनका मोह नष्ट हो गया; और इन चरणों का स्पर्श प्राप्त करके मैं धन्य होऊँगी, यह विचारकर वे हर्षित हो गईं।) केवट राम की आज्ञा पाकर कठौते में भरकर जल ले आया। अत्यंत आनंद और प्रेम में उमंगकर वह भगवान के चरणकमल धोने लगा। सब देवता फूल बरसाकर सिहाने लगे कि इसके समान पुण्य की राशि कोई नहीं है।)

दो० - पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लेइ पार॥ 101॥

चरणों को धोकर और सारे परिवार सहित स्वयं उस जल (चरणोदक) को पीकर पहले (उस महान पुण्य के द्वारा) अपने पितरों को भवसागर से पार कर फिर आनंदपूर्वक प्रभु राम को गंगा के पार ले गया॥ 101॥

उतरि ठाढ़ भए सुरसरि रेता। सीय रामु गुह लखन समेता॥
केवट उतरि दंडवत कीन्हा। प्रभुहि सकुच एहि नहिं कछु दीन्हा॥
पिय हिय की सिय जाननिहारी। मनि मुदरी मन मुदित उतारी॥
कहेउ कृपाल लेहि उतराई। केवट चरन गहे अकुलाई॥
नाथ आजु मैं काह न पावा। मिटे दोष दुख दारिद दावा॥
बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी। आजु दीन्ह बिधि बनि भलि भूरी॥
अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें। दीन दयाल अनुग्रह तोरें॥
फिरती बार मोहि जो देबा। सो प्रसादु मैं सिर धरि लेबा॥
(निषादराज और लक्ष्मण सहित सीता और राम (नाव से) उतरकर गंगा की रेत (बालू) में खड़े हो गए। तब केवट ने उतरकर दंडवत की। (उसको दंडवत करते देखकर) प्रभु को संकोच हुआ कि इसको कुछ दिया नहीं। पति के हृदय को जाननेवाली सीता ने आनंद भरे मन से अपनी रत्न जड़ित अँगूठी अंगुली से उतारी। उसने कहा - हे नाथ! आज मैंने क्या नहीं पाया! मेरे दोष, दुःख और दरिद्रता की आग आज बुझ गई है। मैंने बहुत समय तक मजदूरी की। विधाता ने आज बहुत अच्छी भरपूर मजदूरी दे दी। कृपालु राम ने केवट से कहा, नाव की उतराई लो। केवट ने व्याकुल होकर चरण पकड़ लिए। हे नाथ! हे दीनदयाल! आपकी कृपा से अब मुझे कुछ नहीं चाहिए। लौटती बार आप मुझे जो कुछ देंगे, वह प्रसाद मैं सिर चढ़ाकर लूँगा।)

दो० - बहुत कीन्ह प्रभु लखन सियँ नहिं कछु केवटु लेइ।
बिदा कीन्ह करुनायतन भगति बिमल बरु देइ॥ 102॥
(प्रभु राम, लक्ष्मण और सीता ने बहुत आग्रह और प्रयत्न किया, पर केवट ने कुछ नहीं लिया। तब करुणा के धाम भगवान राम ने निर्मल भक्ति का वरदान देकर उसे विदा किया।)

<u>पाठ-विश्लेषण एवं विशेष संदर्भ</u>

प्रस्तुत पाठ में गोस्वामी तुलसीदास ने श्रीराम और केवट के बहाने भक्त और भगवान के बीच सिर्फ प्रेम को ही सब कुछ माना है जिसके सामने तमाम आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दूरियाँ स्वतः समाप्त हो जाती हैं। श्रीराम का पहले सारथी सुमंत्र के साथ पितृतुल्य आदरभाव और फिर केवट के 'प्रेम से लपेटे हुए अटपटे' बातों को सुनकर भावमुग्ध हो जाना इस बात का प्रमाण है। केवट राम का भक्त है। वह राम जो विष्णु के अवतार हैं और करुणा, दया और क्षमा के

प्रतिमूर्ति हैं। लेकिन केवट सीधे मुंह अपनी बात कहने से हिचक रहा है। क्योंकि राम अयोध्या के राजकुमार हैं और केवट एक नाचीज इंसान अर्थात सामान्य नागरिक। इसीलिए वह अपने दिल की बात कहने के लिए एक बहाना ढूँढता है। और वह बहाना है अहल्या-प्रसंग का। इससे पहले श्री राम प्रस्तरवत हो चुकी मुनि पत्नी को फिर से सजीव और चलायमान कर चुके थे। केवट कहता है कि आपकी चरण-धूलि का ये चमत्कार है कि पत्थर भी स्त्री बन जाती है। अगर मेरी नाव स्त्री बन गई तो मैं कैसे अपने परिवार का भरण पोषण कर पाऊँगा? यहाँ तुलसीदास यह दिखाने का प्रयास करते हैं कि श्रीराम प्रेम के वशीभूत होकर 'सामान्य' और 'विशिष्ट' की दूरी और अंतर को समाप्त कर देते हैं।

इस क्रम में यह भी ध्यान देने की बात है कि गंगा नदी आज बहुत प्रसन्न है, क्योंकि आज राम के चरण का वह स्पर्श कर पाएगी। मनुष्य और प्रकृति के बीच का यह तादात्म्य वेद से लेकर पौराणिक युग तक अक्षुण्ण रहा है। ये अलग बात है कि मनुष्य और प्रकृति के इस भाईचारे को हम विकास की बलिवेदी पर चढ़ा चुके हैं और आज गंगा अपने किसी उद्धारक राम के लिए बाट जोहते हुए अपनी आँखें पथरा चुकी है। तुलसीदास के शब्दों में राम कृपासिंधु अर्थात 'कृपा के सागर' हैं। उनका धर्म बांटने वाला नहीं जोड़ने वाला है- 'शिवद्रोही मम दास कहवा, सो नर सपनेऊ मोहि नहीं भावा।' आप दूसरे से द्रोह और नफरत कर राम को नहीं पा सकते हैं। उनका प्रेम पाने के लिए तो केवट जैसा सरल हृदय चाहिए। और सबसे बड़ी बात भक्ति या प्रेम में निर्लोभ होना पहली शर्त है। ईश्वर के बनाए मानव ही नहीं पशु-पक्षी और प्रकृति से प्रेम ही भक्ति है। सीता केवट को नदी पार कराने के बदले अपनी प्रिय अंगूठी देना चाहती है लेकिन केवट विनम्रता पूर्वक मना कर देते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि 'केवट प्रसंग' के बहाने गोस्वामी तुलसी दास ने भक्ति का जो स्वरूप हमारे सामने प्रस्तुत किया है वह प्रसिद्ध सूफी कवि जायसी के शब्दों में 'मानुस पेम भयउ बैकुंठी' है। अर्थात ईश्वर 'वर्ग', 'वर्ण' और संप्रदाय की दूरी को मिटाकर सिर्फ मानव मात्र से प्रेम करते हैं। और जो मानव जीव मात्र के साथ-साथ प्रकृति से भी प्रेम करता है वही असली भक्त है।

<u>पाठ विस्तार के लिए देखें</u>

गोस्वामी तुलसी दास : रामचरित मानस, गीता प्रेस, गोरखपुर

https://www.hindisamay.com